P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-4*(Supplementary Issue) July- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

जनमानस की कवयित्री – मीरां

सोहनराम
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर

सारांश

वीरगाथाकाल से रीतिकाल अर्थात् 1050 विक्रम से 1900 विक्रम तक के हिन्दी साहित्य के इतिहास का यदि कवयित्रियों के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाये तो मीरा बाई एकमात्र प्रसिद्ध–प्रमुख एवं प्रभावशाली कवयित्री रही है। मीरा का जीवन '' अंसुवन जल सींचि–सींचि, प्रेम बेल बोई– स्वयं की पंक्ति को ही चरित्रार्थ करता है। मीरा का काव्य जनमानस, जनभाषा, जनशैली अथवा जनकाव्य की श्रेणी में आता है। मीरा का काव्य जीवन के यथार्थ का काव्य है।

मुख्य शब्द : हिन्दी साहित्य, मीरां काव्य, भक्तिकाल।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य में स्वर्णयुग के नाम से अभिहित भक्तिकाल का समय 1375 विक्रम से 1700 विक्रम अर्थात् 1318 ईस्वी से 1643 ईस्वी तक का रहा। इस युग में ईश्वरीय–स्वरूप को लेकर दो काव्यधाराऐं तथा चार अन्य काव्यधाराऐं प्रसिद्ध रहीं है।

भक्तिकाल

निर्गुण भक्ति काव्यधारा

1. ज्ञानमार्गी काव्यधारा
2. प्रेममार्गी काव्यधारा

सगुण भक्ति काव्यधारा

1. राम भक्ति काव्यधारा
2. कृष्ण भक्ति काव्यधारा
   - i. कृष्ण का लोकरंजनकारी रूप
   - ii. बाल लीला तथा रासलीला वर्णन
   - iii. मुक्तक शैली एवं ब्रज मिश्रित भाषा
   - iv. गीतित्व प्रधानता
   - v. जनोत्सव का काव्य

''कृष्ण भक्ति साहित्य आनन्द और उल्लास का साहित्य है। इस साहित्य ने जीवन में व्याप्त जड़ता को भंग कर उसे गतिशील बनाया और उद्देश्यहीनता को दूर कर उसे लक्ष्य की ओर अग्रसर किया। जीवन की नीरसता को समाप्त कर उसे सुषमा, सौन्दर्य की ओर अग्रसर करने में कृष्ण काव्य की महत्ती भूमिका रही हैं। कृष्ण भक्ति साहित्य ने सैकड़ो वर्षो तक भक्तजनों को मुग्ध बनाए रखा है।'' [1]

प्रस्तुत शोध–पत्र का विषय मीरां जो कृष्णभक्त कवयित्री है उनमें सन्दर्भित रहा हैं इन महान् स्त्री–विभूति का जन्म 1504 ईस्वी में राजस्थान के मेड़ता में कुड़की गाँव के राठौर राजपूत वंश में हुआ था। पितामह से वैष्णव भक्ति के संस्कार प्राप्त कर मीरां चित्तौड़ के राणा सांगा के पुत्र भोजराज की असमय मृत्यु हो जाने पर अपना सम्पूर्ण जीवन कृष्ण को समर्पित कर देती है।

मीरां काव्य

1. नरसी जी का मायरा
2. गीत गोविन्द टीका
3. राग गोविन्द
4. राग सोरठा के पद

मीरां ने कृष्ण को ही अपना सर्वस्व मानकर पारिवारिक एवं सामाजिक समस्त कष्टों को सहर्ष झेला था ; मीरां कृष्णमय तथा उस समय के कृष्णभक्त मीरांमय हो गये थे। मीरां का काव्य किसी पाण्डित्य प्रदर्शन–चमत्कार प्रवृत्ति प्रदर्शन का प्रयोजन लिए हुए नहीं था वरन् वह तो अपनी उदात्तता एवं भावजन्य अनुभवों को लेकर रचित किया गया था।

''हिर । तुम हरो जन की भीर।
द्रोपदी की लाज राखी, तुरत बढ़ायो चीर।
भक्त कारण रूप नरहरि, धरयो आप सरीर।
हिरणकश्यप मार लीनो, धरयो नाहिन धीर।
बूड़ते गज ग्राह मारियो, कियो बाहर नीर।
दासी मीराँ लाल गिरधर, दुःख जहाँ तहाँ पीर।'' [2]

मीरां का काव्य तत्कालीन परिवेश का दर्पण भी उपस्थित करता हैं इनके काव्य में तत्कालीन प्रचलित परम्पराऐं, उत्सव, त्यौहार, रीति–रिवाज के संग सत्तापक्ष एवं जनसामान्य की मनोवृत्तियों का भी समावेश किया गया है। मीरां उच्चवर्ग से सम्बन्धित होने के उपरान्त भी समाज के प्रत्येक वर्ग में वन्दनीय रही है। मीरां के काव्य में जनचेतना के निम्न तत्व तो प्रत्यक्षरूपेण ही उपस्थित है जैसे :–

1. जन संस्कृति का चित्रण्
2. जन परम्पराओं का चित्रण्
3. समकालीन वातावरण का चित्रण्
4. सामन्ती मानसिकता का विरोध
5. दलित वर्ग को सम्मान देना।
6. स्त्री–विमर्श का काव्य
7. जनभाषा तथा जन जुड़ाव
8. राजसत्ता, धर्मसत्ता के शोषण का चित्रण्
9. सामाजिक विसंगतियों का चित्रण्
10. समाज के भेदभावों का चित्रण्

पति–मृत्यु के उपरान्त मीरां तत्कालीन प्रथा के अनुसार सती नहीं हुई क्योंकि वे स्वयं को अजर–अमर स्वामी की चिरसुहागिनी मानती थी,

''जग सुहाग मिथ्या री सजनी हांवा हो मिट जासी।
वरन् कर्यां हरि अविनाशी म्हारों
काल–व्याल न खासी।।''[3]

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सकल कुटबाँ बरजताँ बोल्या बोल बनाय।
भलो कह्यां काँई कहयाँ बुरोरी सब लया सीस चढाय।[4]

मीरां का काव्य स्वअनुभूत एवम् स्वसंघर्ष का काव्य माना जाता रहा है, मीरां ने स्वयं के भोगे हुए सत्य का चित्रण् अपने काव्य में किया है। भोजराज तथा राणा सांगा की मृत्यु के उपरान्त उनके उत्तराधिकारियों ने मीरां पर अत्यधिक शोषण–दमनचक्र चलाया, अनेक यातनाऐं दी किन्तु मीरां अपने प्रभु–प्रेम पर अटल रही इसी कारण युगान्त हो जाने पर भी कृष्णभक्तों में मीरां का नाम सदैव चिरस्मरणीय रहा है।

व्यक्तिगत चुनौतियों को स्वीकार कर नारी गौरव का एक आदर्श उदाहरण मीरां द्वारा प्रस्तुत किया गया ; राजकुल में जन्म लेने के उपरान्त भी असामाजिक परम्पराओं तथा अन्धविश्वासों का खण्ड़न जिस क्रान्ति का आह्वान करता है वह वास्तव में सहरानीय प्रयास हीं कहा जाऐगा, उसी इसी सन्दर्भ में कहा जाऐं तो उच्चकुलीय स्त्रियों की यह दशा रहीं तो यह विचारणिय है कि निम्नवंशीय स्त्रियों की क्या दशा मध्यकालीन विषम परिस्थितियों के वातावरण में रही होगी।

दूसरी तरफ यदि व्यक्तिगत जीवन की चर्चा न कर यदि हम तत्युगीन परिवेश का फलक देखे तो मीरां का युग राजनीति, समाज और धर्म–साधना की दृष्टि से संघर्षपूर्ण युग रहा था जिसमें मानवता का पूर्णहनन, समाज–नैतिकता का पतन एवं बाहरी आक्रमणकारियों के द्वारा धर्मपरीवर्तन का युग प्रारम्भ कर दिया गया था, समाज अनैतिकता एवं निराशा के घोर अन्धकार के वातावरण में डूब चुका था, सभ्यताऐं अपनी संस्कृति की रक्षा कर पाने में पूर्णतः विफ़ल हो रही थी।

ऐसे ही समय में भक्ति आन्दोलन अपनी अमृतमयी वाणी के द्वारा मानव–समाज–धर्म–सभ्यता–संस्कृति के परिस्कार का कार्य करता है। पुरूष–वर्चस्व को चुनौती देता–सामान्ती मानसिकता का विरोध करता मीरां का काव्य इसी का अप्रितम उदाहरण रहा है।

''मीरा किसी सन्त से प्रभावित होकर बालकाल में ही भक्तिभाव में खो गयी थी। तेरह वर्ष की अवस्था में वे शास्त्रीय संगीत, योगसाधना और साहित्य रचना में निष्णात थी मीरां की भक्ति एकांगिक नहीं थी। अनेक विद्धानों का मत हैं कि वह एक सामाजिक चुनौती के रूप में प्रकट हुई थी। मीरां ने समूचे पुरूष समाज को नहीं नकारा। आखिर, वे सन्तों के साथ तो रहती थी। इनका काव्य मधुरा भक्ति द्वारा ही समझा जा सकता हैं परन्तु इतिहाससाक्षी है कि राजस्थान के कुछ लोग मीरां को आज भी सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते। मीराँ की रचना मध्यकालीन भक्ति युग में अपनी अलग अहमियत रखती हैं। मीरां का काव्य भोगे हुए यथार्थ का सत्य है जो अनुभूतियों से परिपूर्ण है।'' [5]

''मीरां के कृष्ण रासबिहारी तथा गिरधर गोपाल रहें जो संसार का उद्धार करने हेतु पृथ्वीलोक पर अवतरित होते है। मीरां का काव्य व्यक्तिगत होते हुए भी समष्टिगत और स्वहितसुखाय होते हुए भी परहितसुखायवादी रहा हैं। उच्चकुलीय होने पर भी मानवता उनमें चरमरूपेण रही थी जहाँ एक तरफ तुलसी का सामीप्य मीरां को प्राप्त है वहीं दूसरी तरफ निम्नजाति के महान् व्यक्तित्वधारी रैदास का गुरूत्व भी इन्हें प्राप्त हुआ।'' [6]

राजस्थान की मंदाकिनी नाम से प्रसिद्ध मीरां का व्यक्तित्व इसी से समझा जा सकता हैं कि इन्होनें भक्तिकालीन समय में राजस्थान प्रान्त को कृष्णमय बना दिया था ; मीरां के संस्कारों के कारण मीरां परवर्ती चित्तौड़ राजाओं ने नाथद्वारा तथा कृष्ण मन्दिरों की स्थापनाऐं कर कट्टर औरंगजेब का तीव्र विरोध भी किया था।

सांसारिक भावों का त्याग, वैराग्य साधना, नारीत्व का गौरव, सामाजिकता, जनवादी तत्वों का निर्वहन, उच्च से निम्न वर्ग से समन्वय, सत्संग, गुरू महिमा, सामन्ती मानसिकता का विरोध, अन्धविश्वासों का खण्ड़न, कुपरम्पराओं का विरोध एवं आधुनिकालीन साहित्य के ज्वलन्त विषय–स्त्रीविमर्श एवं दलित विमर्श मीरां के काव्य में कूट–कूटकर सरोबारित है। मीरां का काव्य जनकाव्य है तथा मीरां अपने समय के जनमानस को अभिव्यक्त करने वाली जनकवयित्री रही है। उनकी दृष्टि में जगत्मिथ्या है, धरती पर जो सुख–साधन है वे नश्वर है, जीवन क्षणभंगुर है इसी कारण इनका काव्य सांसारिकता रहित होकर मानवतावादी की प्रतिष्ठा करता

हुआ अलौकिक साहित्य है। मीरां का महत्व इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि 1050 ईस्वी से वर्तमान तक मीरां के समकक्ष स्त्री–व्यक्तित्व हिन्दी साहित्य में नज़र नहीं आता। मीरां की तुलना अथवा उपमा किसी से नहीं की जा सकती है इसी कारण यदि हम मीरां को अतुलनीय अथवा अउपमेय कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोधपत्र मीरा की सामाजिकता उनका जनमानस में स्थान प्रस्तुत करता है, मीरा का काव्य तत्कालीन परिस्थितियों तथा युगबोध को प्रदर्शित करता हुआ एक प्रासांगिक काव्य रहा है जिसमें मुख्यतः जाति–पाँति, भेदभाव, उच्च–निम्न और भक्ति के द्वार सभी वर्गों हेतु है, इस मानसिकता और विचारधारा को हिन्दी में प्रगतिवादी, समाजवादी और मानवतावदी भी कहा गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *नेट–द्वितीय प्रश्न पत्र हिन्दी, प्रतियोगिता साहित्य, पृ.स. 112*
2. *प्रज्ञा प्रवाह कक्षा 11, राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर, पृ.स. 20*
3. *मीराबाई की पदावली परशुराम चतुर्वेदी, पृ.स. 97*
4. *मीराबाई की पदावली परशुराम चतुर्वेदी, पृ.स. 98*
5. *हिन्दी साहित्य का इतिहास नगेन्द्र, पृ.स. 221*
6. *भक्तिकाल के प्रमुख कवियों का पुनर्मूल्याकंन डॉ. त्रिपाठी ओमप्रकाश, पृ.स. 192*